वेदान्त आश्रम एवं मिशन की मासिक ई - पत्रिका

वेदान्त पीयूष

वर्ष २४ मई - २०२४ प्रकाशन - ०५

सम्पादिका :

स्वामिनी अमितानन्द सरस्वती

वेदान्त पीयूष

मई २०२४

प्रकाशक

वेदान्त आश्रम,

ई - २९४८, सुदामा नगर

इन्दौर - ४५२००९

Web : https://www.vmission.org.in

email : vmission@gmail.com

वेदान्त पीयूष

विषय सूचि

मई 2024

निर्गुणो निष्क्रियो नित्यो निर्विकल्पो निरंजनः।
निर्विकारो निराकारो नित्यमुक्तोऽस्मि निर्मलः।।

(श्लोक - ३४)

मैं निर्गुण, निष्क्रिय, नित्य, निर्विकल्प, निर्विकार, निराकार नित्यमुक्त और निर्मल हूं।

सन्देश

निश्चय की दुनिया

अज्ञान का अस्तित्व और एहसास अत्यन्त बेचैनी व घुटन की अनुभूति कराता है। अतः अज्ञान की घुटन व पीड़ा को दूर करने के लिए शीघ्र ही किसी न किसी निश्चय पर पहुंचना चाहते हैं। मन की उथल-पुथल व विक्षेप किसी निश्चय पर पहुंचने से खत्म हो जाते हैं। वह संतुष्टि व प्रफुल्लता प्रदान करती है, अतः निश्चय कल्याणकारी होता है। निश्चयों के स्वरूप और उसके प्रभाव स्पष्टता से देखना चाहिए। क्योंकि निश्चय अर्थात् बुद्धि ही हमारे मन की आत्मा है। निश्चय ही हमारे जीवन की दिशा तय करते हैं। किसी चीज के बारे में सुख वा दुःख की प्राप्ति के निश्चय के उपरान्त उसे आधार बनाकर ही प्रवृत्ति वा निवृत्ति होती है। एवं समस्त कर्म का आधार निश्चय ही होते हैं। यह निश्चय संस्कार, चिन्तन मनन, ज्ञान से प्रभावित होते हैं।

निश्चय की दुनिया

किसी निश्चय पर पहुंचने अर्थात् अज्ञान की निवृत्ति के लिए दो तरीके सम्भव होते हैं। प्रामाणिक तरीके का आश्रय लेकर निश्चय करें अथवा अप्रामाणिक निश्चय करें। प्रामाणिक तरीके का आश्रय लेकर निश्चय करना ही ज्ञान है। अप्रामाणिक ज्ञान में भी कुछ न कुछ अवधारणा होती है। उन निराधार अप्रामाणिक निश्चयों को ही कल्पना कहा जाता है। कल्पना अज्ञानियों द्वारा लिया गया ज्ञान का विनाशकारी विकल्प है। कल्पना का आश्रय लेने पर लगता है कि हमने जान लिया और समस्त ज्ञान के फल की भी प्रतीति होती दिखती है। कल्पनाशक्ति पर आश्रित होना भयावह होता है। संसारी व्यक्ति की समस्त समझ प्रामाणिक न होते हुए केवल कल्पना मात्र होती है। यह समस्त अध्यारोप मात्र ही है, जो उसकी दृष्टि से ज्ञान है वो ज्ञानियों के लिए उपेक्षणीय होता है। कल्पना, ज्ञान की शून्यता को अवश्य भरती है, अज्ञान की बेचैनी व घुटन को भी दूर करती है। हम तत्क्षण कुछ न कुछ निश्चय से युक्त हो जाते हैं और जिज्ञासा का शमन हो जाता है। निश्चय करने में कल्पना शीघ्र आशीर्वाद देती है। किन्तु परिणाम यह होता है कि हम अपना जीवन कल्पनाओं पर आश्रित

कर देते हैं। जीव, जगत और ईश्वर तथा सुखादि के बारे में कल्पना करके उसके अधीन होकर जीना ही संसार है। भ्रामक निश्चय की वजह से इतनी बडी किमत चुका रहे हैं कि जन्म-जन्मान्तर से इस संसार की यात्रा में, अन्तहीन खोज में लगे हैं। जीवन में निश्चय का अत्यन्त महत्व होता है।

जीवन का पूरा महल अपने निश्चयों पर ही आश्रित है। हमारे राग और द्वेष के अनुरूप प्रवृत्ति हो रही है, विविध प्रकार की इच्छाएं, ग्रहण और त्याग की चेष्टा तथा प्रवृत्ति व निवृत्ति का आधार केवल भ्रामक निश्चय ही बने हुए हैं। जो धर्माचरण करता है, उस व्यक्ति ने उचित-अनुचित का प्रामाणिक व शास्त्रोक्त तरीके से ज्ञान तो प्राप्त किया है, किन्तु निश्चय करनेवाले जीव के बारे में प्रामाणिक ज्ञान का अभाव है, अतः भ्रामक निश्चय कर लिया है। जब इस निश्चयकर्ता को ही अपने बारे में प्रामाणिक ज्ञान नहीं है, तो उसके द्वारा प्राप्त समझ एवं तज्जनित प्रवृत्तियां वे सब निराधार व भ्रामक ही होगे। हमारे निश्चय अत्यन्त महत्वपूर्ण होते हैं, अतः कल्पनात्मक निश्चय और प्रामाणिक निश्चयों का भेद देखना चाहिए।

सदैव प्रामाणिक निश्चय करने का मूल्य हो जाए और उसका ही अभ्यास डालना चाहिए। इसके लिए अज्ञान की घुटन के प्रति तितिक्षा से युक्त होकर संकल्पपूर्वक प्रामाणिक ज्ञान के लिए उपलब्ध होना चाहिए। वह ही कल्याणकारी तरीका है। यह संकल्प हो कि हम किसी भी हालत में कल्पना नहीं करेंगे। न अपने बारे में और न ही जगत के बारे में। जो अपने बारे में प्रामाणिक ज्ञान की प्राप्ति से ही समस्त कल्पनाओं से परे सत्य को जाना जाता है, वो ही इस अन्धकारमय संसार से परे दिव्य अवस्था में जगता है।

आदि शंकराचार्य

द्वारा

विरचित

वाक्यवृत्ति

स्वामिनी अमितानन्द

यस्य प्रसादादहमेव विष्णुः मयि-एव सर्व परिकल्पितं च।
इत्थं विजानामि सदात्मरूपं तस्यान्घ्रि पद्मं प्रणतोऽस्मि नित्यम्।।

गुरुरुवाच

सत्यमाह भवानत्र
विगानं नैव विद्यते।
हेतुः पदार्थबोधो हि
वाक्यार्थाविगतेरिह।।

गुरु : हे पुत्र!
तुमने एकदम सत्य कहा कि, 'शब्द के अर्थ के ज्ञान के बगैर वाक्य के अर्थ का ज्ञान सम्भव नहीं होता है।

वाक्यवृत्ति

आचार्य शिष्य की ज्ञान के लिए उपलब्धता और श्रद्धा को देखकर प्रसन्न हो रहे हैं। शिष्य गुरु की बात को आंख बन्ध करके स्वीकार भी नहीं करता है और साथ ही नहीं उसकी उपेक्षा करता है। किन्तु वह पूर्ण जाग्रति के साथ उपलब्ध है। यह दीखाता है कि वह केवल बौद्धिक ज्ञान मात्र की सन्तुष्टि नहीं चाहता है। स्वयं इस ज्ञान को आत्मसात् करके जाग्रति चाहता है। उनकी बन्धन से मुक्ति की अपेक्षा – मुमुक्षा अब जिज्ञासा का रूप ले चुकी है। अतः वह प्रश्न कर रहा है।

साथ ही गुरु भी शिष्य की उपलब्धता और जिज्ञासा की सराहना करते हैं और उसकी बात का अनुमोदन करते हैं।

आचार्य बताते हैं कि यह बात सत्य है कि शब्द के अर्थ के ज्ञान के बगैर वाक्य के अर्थ का ज्ञान होना सम्भव नहीं है। अनेकों पदों के समूह से एक वाक्य बनता है। यहां तत्त्वमसि महावाक्य

में तीन पद प्रयुक्त है - वह है तत्, त्वं और असि। तत् का अर्थ होता है ईश्वर, त्वं का तुम अर्थात् जीव और असि दोनों का ऐक्य दिखाता है। यद्यपि शब्द का अर्थ सामान्य रूप से तो हर व्यक्ति जानता है। किन्तु ईश्वर किसे कहते है? जीव किसे कहते है? इनके बारे में जितना समझ रहे हैं, वह पर्याप्त नहीं है। अतः उसके शब्दार्थ को जानना आवश्यक है। जब शब्दार्थ का ज्ञान होता है, तब ही वाक्य के अर्थ पर विचार और उसके अर्थ का अनुकुल चिन्तन हेतु आवश्यक लक्षणा का प्रयोग हो सकता है। अतः आचार्य भी शिष्य का अनुमोदन करते हैं। पहले शब्द के अर्थ अर्थात् वाच्यार्थ को जानें उसके उपरान्त ही उसका लक्षित अर्थ जो कि वर्तमान अनुभूतियों से अत्यन्त विलक्षण है, यह ज्ञात होगा। अतः आचार्य बताते हैं कि, 'तुमने एकदम सत्य कहा कि, 'शब्द के अर्थ के ज्ञान के बगैर वाक्य के अर्थ का ज्ञान सम्भव नहीं होता है।

गीता और मानवजीवन

पूज्य स्वामी विदितात्मानन्दजी

-: ११ :-

ऋण-मुक्ति

गीता और मानवजीवन

मनुष्य को अपने कर्म के माध्यम से, वेदोक्त तीन प्रकार के ऋण - पितृऋण, ऋषिऋण और देवऋण से मुक्ति हेतु प्रयत्नशील रहना चाहिए।

पितृऋण को सेवा-तर्पण के द्वारा चुकाया जाता है। माता-पिता के होने पर उनकी सेवा के द्वारा और नहीं होने पर उन्हें श्राद्ध-तर्पण के द्वारा तृप्त किया जाना चाहिए। यदि किसीको यह शंका हो कि, 'स्वामीजी! यहां ब्राह्मणों को खिलाए और पितृओं को वहां पितृलोक में फल मिले, यह किसने देखा है? क्या यह किसीकी कल्पनामात्र नहीं है? पितृलोक है भी या नहीं, उसका भी तो पता नहीं है। उसे देखने तो गए नहीं है! यह तो शास्त्रों में लिखा है, इसलिए उसे स्वीकार कर लेते है। किन्तु पितृलोक नहीं है, उसका भी तो कोई प्रमाण नहीं है! इसलिए वह नहीं है, ऐसा भी नहीं कह सकते है। इन्द्रियों से जिसे नहीं जान सकते है, उन-उन विषयों में शास्त्रों को ही प्रमाणभूत माना जाना चाहिए। शास्त्र कहते है कि देह की मृत्यु होने पर आत्मा की मृत्यु नहीं होती है।

कठोपनिषद् में नचिकेता यमराज से पूछता है, 'मनुष्य की जब मृत्यु होती है, तो यह संशय रह जाता है, कोई कहता है कि देह से भिन्न आत्मा है और कोई कहता है कि देह से भिन्न नहीं है। उसका यमराज उत्तर देते हैं कि, देह से भिन्न आत्मा है और इसलिए देह के मृत्यु होने पर जीव के अस्तित्व का अन्त नहीं होता है। इसका अर्थ है कि मृत्यु के समय देह त्यागकर जीव अन्यत्र प्रयाण करता है। तब इस यात्रामें और उसके बाद का जो जीवन है, उसमें हम कैसे उसे सहायभूत हो सकते है? इसलिए श्राद्ध, तर्पण विगेरे क्रियाएं अपने शास्त्रों में कही गई है। श्राद्ध विगेरे क्रियाएं श्रद्धा पर आधारित है। श्रद्धया क्रियते इति श्राद्धम्। अपने पूर्वजों का अस्तित्व है और हम उन्हें ख्याल में रखकर शास्त्र के विधान के अनुरूप जो कर्म करते हैं, वे उन्हें प्राप्त होते है – यह मान्यता श्रद्धा पर ही रची गई है। हम पितृओं के ऋणी है, तो किस प्रकार ऋण को अदा करें? कदाचित् आप श्राद्ध विगेरे में नहीं भी मानते हो तो किसी अन्य तरीके से करें, किन्तु माता-पिता के और पूर्वजो के ऋण विषयक अपने अन्दर संवेदना होनी चाहिए। अपने कर्म में किसी न किसी रूप में यह वस्तु प्रतिबिम्बित होनी चाहिए, अभिव्यक्त होनी चाहिए।

ऋषियों के ऋण को चुकाने के लिए हमें

ज्ञान की साधना करनी चाहिए। हमें ज्ञान प्राप्त करना चाहिए और इस ज्ञान की परम्परा बनी रहें उसके लिए सक्रिय रूप से ज्ञान का प्रचार करना चाहिए या उसके प्रचार में सहयक होना चाहिए।

तीसरा ऋण है देवऋण। उसे कैसे चुकाना चाहिए? हवन, पूजन और प्रार्थना के द्वारा देवताओं को सन्तुष्ट करना चाहिए। किसी द्रव्यरूप आहुति प्रदान करें या फिर अपनी भावना की आहुति दें। किन्तु किसी न किसी रूप में आहुति देने से देवतागण पुष्ट होते हैं और उसके माध्यम से देवऋण चुकाया जाता है।

इस विषयक भी अनेकानेक वाद-विवाद तथा विविध अभिप्राय है। लोगों को भोजन तो मिलता नही है और उसे अग्नि में होम कर देना कहां तक उचित है? बच्चों को दूध मिलता नहीं है तब आप दूध को नदी में क्यों डालते हो? यह सब चर्चा के विषय है। किन्तु अपने ऐसे कर्म से देवता प्रसन्न होते है, उस वषय में क्या प्रमाण है? शास्त्र ही प्रमाण है। इस पंचमहाभूत में हम कित-कितनी अशुद्धियां डालते रहते है! अपशब्द बोलते हुए आकाश को दूषित करते है। देह में से अनेकों प्रकार की अशुद्धियां बाहर नीकालकर

हवा को, पृथ्वीको, जल को और अन्य तत्त्वों को मलिन किया करते है। तो फिर शुद्धि के लिए कुछ तो करना चाहिए न? धूपबत्ती जलाएं तो वायु शुद्ध होती है। वेद के मंत्रोच्चार से आकाश शुद्ध होता है। वे शब्द आकाश में गुंजने लगेंगे। इस प्रकार, यह सब क्रियाओं के पीछे यह हेतु है कि अपने अस्तित्व और व्यवहार से जो दोष या अशुद्धि हम फैलाते हैं उसका निवारण के लिए हम कुछ करें। यह भी श्रद्धा का विषय है। किन्तु यह सत्य है कि देवताओं का उपकार हम पर सतत है, और इसलिए उसके प्रतिभाव रूप से कुछ तो हमारे माध्यम से होना चाहिए। देवताओं के पूजन के लिए एक पद्धति अपनाएं कि दूसरी; यह व्यक्ति स्वयं निश्चय कर सकता है। किन्तु अपने जीवन में यह संवेदना होनी चाहिए कि 'मैं देवताओं का ऋणी हूं, इसलिए हमारे कार्यो के द्वारा उनके ऋण को हमें चुकाना है।'

इस प्रकार माता-पिता और पूर्वजों का ऋण सेवा और श्राद्ध-तर्पण के द्वारा, ऋषियों का ऋण ज्ञान संपादन एवं प्रचार के द्वारा और देवता का ऋण यज्ञ, दान और तप आदि के द्वारा चुकाने की संवेदना और सक्रियता हममें होनी चाहिए।

– ४५ –
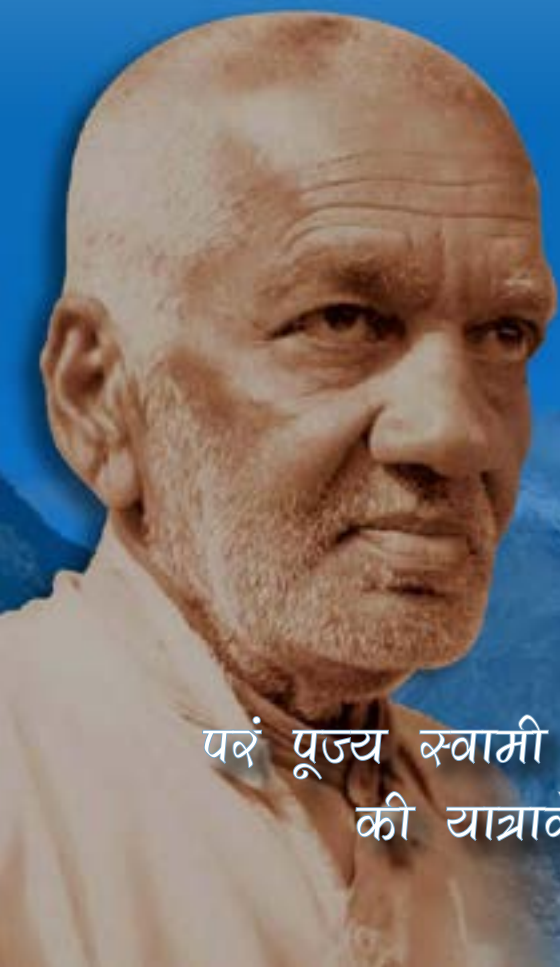
गंगोत्री

परं पूज्य स्वामी तपोवन महाराज
की यात्राके संस्मरण
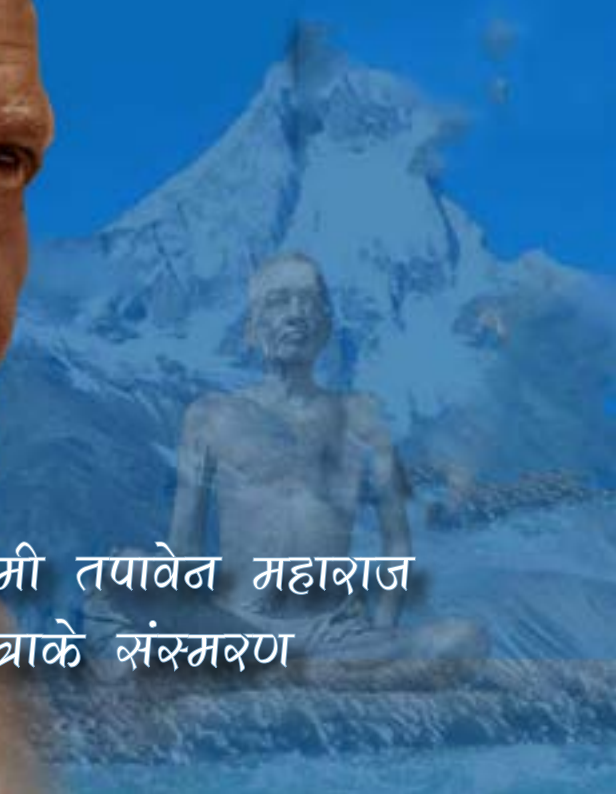
जीवन्मुक्त

एक बार गंगोत्री की ओर एकाकी होकर चलते हुए यह साधु गंगोत्री से अठ़ारह-बीस मील निचले प्रदेश में मार्ग के किनारे निर्झर के पास एक पेड के नीचे बैठ़ा था। वह निर्जन, निःशब्द तथा नितान्त सुन्दर स्थान मेरे मन को सत्त्वभूमि की ओर ले जाकर आनन्द देता रहा, तो भी क्षुधा राक्षसी का आक्रमण बीच बीच में मेरे शान्ति देवता को आकुल कर देता था। उस दिन मैं कुछ भी न खा सका। मार्ग के पास एक गांव में आकर यद्यपि मैंने भिक्षा मांगी थी, तो भी वहां से मैं कुछ नही पा सका था। परमात्मा की भक्तवत्सलता में अति श्रद्धालु मैं यह जानने के लिए कि आज करुणा विश्वम्भर किस प्रकार इस साधु का पेट भरेंगे, बच्चों के समान कौतुक के साथ ललचाते हुए उस वृक्षमूल में ही विश्राम करता रहा। अभी वर्षा को

अधिक समय न बीता था। अतः हिमालय की विचित्र प्रकृति शोभा दर्शनीय थी, तथा क्षीर की भ्रान्ति देनेवाले गंगोदक की तत्कालिक कान्ति हृदयाल्हादक थी।

इस सौन्दर्य से अभिभूत होकर मैं यह भूल गया था कि अब आगे भी रास्ता तय करना है, और मैं वहीं कुछ देर तक बैठा रहा। लीजिएं, एक सुदामा सदृश्य पर्वतीय वृद्ध ब्राह्मण एक भारी बोझ पीठ़ पर लादे थका मांदा, पसीने से तर उसी मार्ग से धीरे धीरे चला आ रहा है। पीठ़ से बोझ उतारकर जलधारा के पास बैठ़ क्षुधा पीड़ित वह भोजन के लिए अपने पाथेय की गठ़री खोलने लगा। कुछ दूर पर एक संन्यासी को देख सारा भोजन अपने हाथ में लिये मेरे पास चला आया, प्रणाम किया और प्रार्थना करने लगा कि मैं इसमें से यथेष्ट स्वीकार करूं।

उसकी भक्ति तथा उदारता देख मैं अति उल्लासित हुआ। मुझे ऐसा लगा कि साक्षात् ईश्वर ही पथिक के रूप में मेरी क्षुधा शांत करने के लिए आ उपस्थित हुए हैं। उसका भोजन बिना नमक के पकाया आलू मात्र था। मैंने उनकी इस आश्चर्यजनक आस्तिक्य बुद्धि तथा धार्मिक भावना की मन ही मन प्रशंसा की। अहो दीनबन्धु! अपने खाने के लिए गांठ में बांधकर लाये

भक्ष्य पदार्थ को स्वयं भूखे रह दूसरे की उदरपूर्ति के लिए दे देना संसार में कितना असाधारण है। किन्तु सच्चा त्याग और उत्तम दान यही है। स्वयं पेट भर खा पीकर दूसरों को गर्व के साथ खिलाना पिलाना यथार्थ त्याग या दान नहीं होता। अपने खाने के लिए बने भोजन को यदि कोई भिक्षुक आकर मांगे, तभी उस दाता की त्याग महिमा तथा दान महिमा देखनी चाहिए। महाभारत के नेवले की कहानी तो प्रसिद्ध है। दानवीर धनियों द्वारा दानरूप में दी गयी धनराशि की तुलना में गरीबों का ऐसा दरिद्र दान कितना मूल्यवान होता है? उस निर्जन गिरि शिखर पर ईश्वर से प्रेरित उस भक्ष्यविशेष को मैंने थोडा सा स्वीकार किया और भगवान् के प्रसाद रूप में उसे खाकर तथा जल पीकर मैं तृप्त हुआ, और वहां से उठ़कर फिर आगे की ओर बढ़ता गया। तभी मेरे मुख से निकला–

त्वमेव माता च पिता त्वमेव। त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव। त्वमेव सर्वं मम देव देव।।

(श्री रामचरित मानस पर आधारित)
श्री जनक चरित्र
– ०२ –
प्रनवउं परिजन सहित विदेहू।
जाहि राम पद गूढ सनेहू।।

श्री जनक चरित्र

निष्काम कर्म के पीछे कौन-सी प्रेरणा होगी? क्या केवल बौद्धिक प्रेरणा ही इसके लिए यथेष्ट है? बुद्धिसंगत होते हुए भी केवल निष्काम भाव से कर्म, जड़, यान्त्रिक प्रक्रिया में तो सम्भव है किन्तु केवल कर्तव्यबुद्धि मनुष्य के हृदय को रसाप्लवित नहीं कर सकती। कर्म करते हुए व्यक्ति को जिस उत्साह और आनन्द की अनुभूति होती है, वह फल प्राप्ति की आशा से ही सम्भव है। यदि उसका निषेध कर दिया जाय तो या तो कर्म करने का उत्साह समाप्त हो जाएगा या कर्म को भार की तरह ढोना होगा। इसका निराकरण समर्पण योग के माध्यम से ही सम्भव है। कर्म जब प्रभु के प्रति समर्पण की भावना से किए जाते हैं तब उनमें अद्भुत आनन्द की अनुभूति होती है। भोजन को सुस्वादु बनाने की प्रेरणा व्यक्ति को तभी होती है कि जब या तो स्वादलोलुप हो या अपने प्रिय व्यक्ति को खिलाने की इच्छा हो। भोजन को जब केवल एक बाध्यता समझकर बनाया जाय तब वह बन भले ही जाय पर उसमें स्वाद और रसानुभूति की सम्भावना नहीं के बराबर होगी। इसीलिए निष्काम कर्मयोग के बाद भगवान कृष्ण अर्जुन को

कर्मार्पण का उपदेश और आदेश देते हैं –
यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्।।
इस तरह ज्ञानयोग और कर्मयोग की समग्रता के लिए भक्तियोग अनिवार्य है। मानस में महाराज श्री जनक का जो चित्र प्रस्तुत किया गया है उसमें तीनों योगों के रंग विद्यमान है। वे मानस में एक स्नेही पिता के रूप में उनसे जो नाता स्वीकार करते हैं वह शारीरिकनाते स कहीं बढ़कर है। शरीरजन्य पुत्री हल चलाते हुए पृथ्वी की गोद से प्राप्त करते हैं। यह हल संचालन भी निष्काम कर्मयोग का प्रतीक था। किसान हल चलाने के साथ-साथ खेत में जो बीज बोता है वही बीज उसे कई गुना होकर प्राप्त होता है। कृषि का यह स्वरूप सकाम कर्म का प्रतीक है। सकाम कर्म में दोनों ही सम्भावनाएं विद्यमान रहती हैं। कृषि कार्य का समग्रता से निर्वाह फल की सृष्टि करता है। महाराज श्री जनकहल चलाते हुए भी बीज नहीं बोते। वे फलाकांक्षा से रहित हैं। उन्हें सीता की उपलब्धि भक्ति की प्राप्ति की प्रतीक है। इसे यों कह सकते हैं कि निष्काम कर्मयोग की परिणति अन्त में भक्तियोग की उपलब्धि है। श्री रामचन्द्र ने लक्ष्मण के समक्ष इस क्रम परम्परा का उपदेश भी किया है कि – प्रथमहिं बिप्र चरन अति प्रीति। निजि निज धरम निरत श्रुति नीती।। तेहि कर फल पुनि विषय बिरागा। तब मम चरन उपज अनुरागा।।

कथा / प्रसंग

श्रद्धावांल्लभते ज्ञानम्

श्रद्धावांल्लभते ज्ञानम्

प्रश्नोपनिषद् में एक प्रसंग प्राप्त होता है कि एक समय पांच ऋषि पुत्र, जो अपने अपने क्षेत्र में बहुत विद्वान एवं प्रवीण थे, वे कुछ प्रश्नों के समाधान हेतु पिप्पलाद ऋषि के पास पहुंचे। विनीत भाव से उन सबने अपने आने का कारण बताया। तब पिप्पलाद ऋषि ने कहा कि, 'पहले कुछ वर्ष आश्रम में रहकर सेवा तथा तपस्या करो। जब तुम्हारी सेवा से मैं प्रसन्न हो जाऊँगा। तब तुम्हें प्रश्न पूछने की अनुमति होगी। अनुमति देने के बाद यह निश्चित नहीं कि तुम्हें अपने प्रश्नों का उत्तर प्राप्त होगा या नहीं। यदि मैं जानता हूंगा तो तुम्हें उत्तर अवश्य प्राप्त होगें, अन्यथा किसी अन्य गुरु की तलाश में चले जाना। किन्तु तब तक तुम्हें आश्रम में अन्तेवासी की तरह रहकर सेवाकर्म में संलग्न होना पडेगा।'

यह सुनने के उपरान्त उन साधकों की यह सोचने की स्वाभाविक ही सम्भावना थी कि यदि हम अपने जीवन का अमूल्य समय –

कई वर्ष सेवा में लगाने के उपरान्त ऋषि पिप्पलाद ने जब हमारे प्रश्न सुनें और यदि ये कह दें कि हमें आपके प्रश्नों का उत्तर नहीं पता है, अतः आप यहां से किसी अन्य गुरु की तलाश में जाएं।' यह विचार ही उन्हें यहां रहने में संकोच व क्षोभ का अनुभव कराता।

किन्तु पिप्पलाद ऋषि का इतना स्पष्टतः अभिप्राय सुनने के बाद भी पांचों ऋषिपुत्र वहां श्रद्धापूर्वक सेवा के लिए समर्पित हो गएं और परिणाम स्वरूप उन्हें गुरु पिप्पलाद ऋषि की प्रसन्नता का प्रसाद प्राप्त हुआ। उन्हें अपने समस्त प्रश्नों का उत्तर मिला और वे कृतार्थ हुएं। उनकी श्रद्धा और समर्पण ने ही उन्हें इस ज्ञान के लिए पात्र बनाया; जिससे वे ज्ञानका प्रसाद पाकर अनुगृहीत हुएं।

Mission & Ashram News

Bringing Love & Light
in the lives of all with the
Knowledge of Self

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

Bhagwad Gita & Parenting

आश्रम / मिशन समाचार
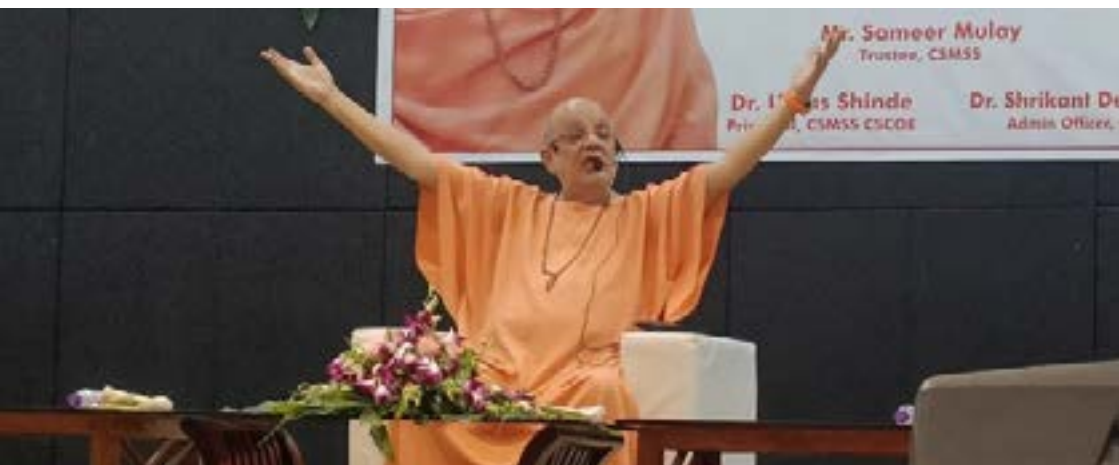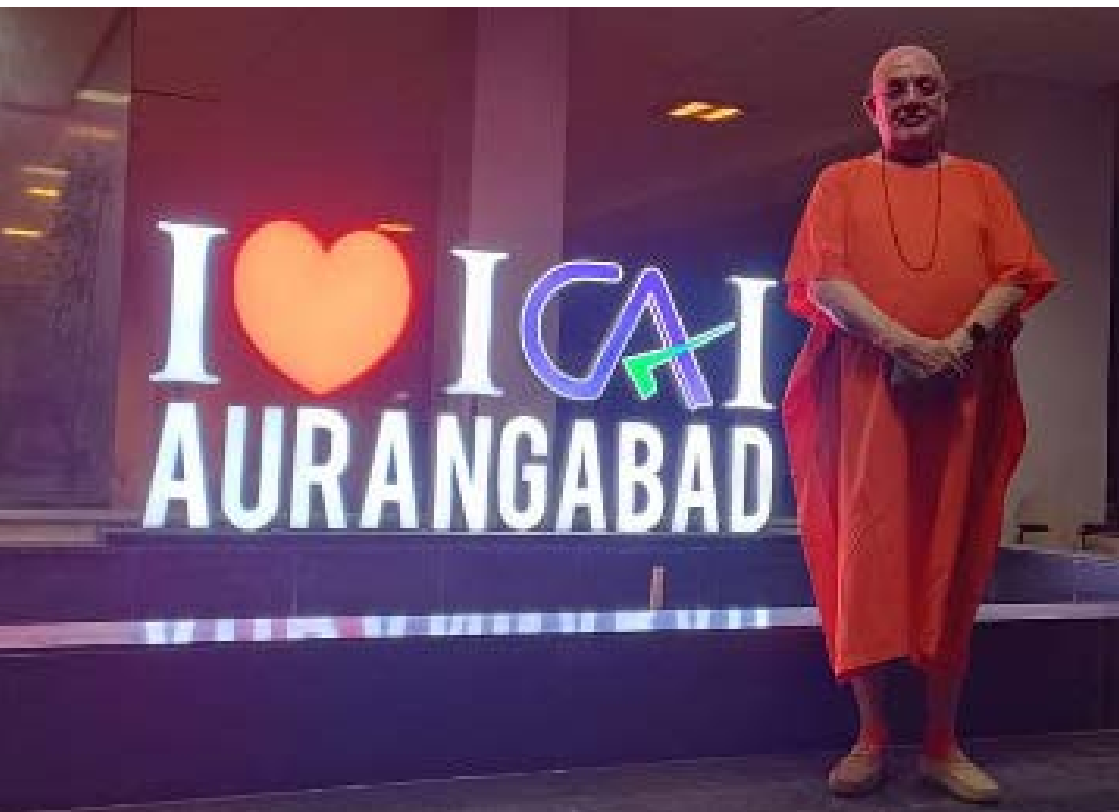
With Faculty Members & Parents of Students

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

Sh NK Kagliwal, Chairman, Nath Group welcomes Poojya Guruji

आश्रम / मिशन समाचार

Tasting the Khichdi with Group Bosses

आश्रम / मिशन समाचार
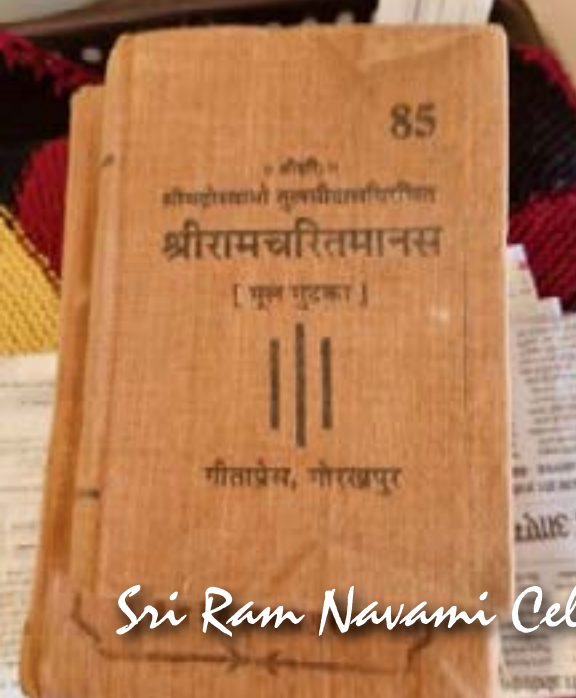
Sri Ram Navami Celebrations at Ashram

आश्रम / मिशन समाचार

Puja & Arti by Ashram Mahatmas

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

Rekha Sharma takes Blessings on her Birthday

आश्रम / मिशन समाचार

Divine Blessings

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

श्रीमद् भगवद् गीता

(शांकर भाष्य समेत) नित्य कक्षाएं

प्रतिदिन प्रातः 7.30 बजे से (मंगल से शनिवार)

वेदान्त आश्रम, इन्दौर

पूज्य गुरुजी स्वामी आत्मानन्दजी

Internet News

Talks on (by P. Guruji) :

Video Pravachans on YouTube Channel

(☝ Click here)

GITA / UPANISHAD/ PRAKARAN GRANTHAS

SUNDARKAND / HANUMAN CHALISA

SHIV MAHIMNA STOTRAM / CHANTING

MORAL STORIES ETC

Audio Pravachans (☜ Click here)

GITA / UPANISHAD/ PRAKARAN GRANTHAS

Vedanta Ashram YouTube Channel

Vedanta & Dharma Shastra Group

Monthly eZines

Vedanta Sandesh - May '24

Vedanta Piyush - Apr '24